**ओ३म्**

**‘सत्याचरण से अमृतमय मोक्ष की प्राप्ति मनुष्य जीवन का लक्ष्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

हमारी जीवात्माओं को मनुष्य जीवन ईश्वर की देन है। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान होने के साथ सर्वज्ञ भी है। उससे दान में मिली मानव जीवन रूपी सर्वोत्तम वस्तु का सदुपयोग कर हम उसकी कृपा व सहाय को प्राप्त कर सकते हैं और इसके विपरीत मानव शरीर का सदुपयोग न करने के कारण हमें नियन्ता ईश्वर के दण्ड का भागी होना पड़ सकता है। इस शिक्षा को एक उदाहरण से इस प्रकार समझ सकते हैं कि हमने किसी भूखे व्यक्ति को देखा। उसके पास भूख दूर करने के साधन नहीं है। उसके प्रति हमारे अन्दर दया उत्पन्न हुई। हमने उसे कुछ धन दिया जिससे वह भोजन कर सके। यदि वह भोजन कर अच्छे काम करेगा तो हमें स्वाभाविक रूप से प्रसन्नता होगी और यदि वह उस धन से भोजन न कर उस धन से अन्य किसी निकृष्ट पदार्थ मदिरापान का सेवन व अभक्ष्य पदार्थ को खाता है तो हमें अपने कृत्य पर पछतावा होगा। हम इसके बाद उसकी सहायत नहीं करेंगे। ईश्वर ने भी जीवात्मा पर दया करके उसे दुर्लभ व सर्वोत्तम मानव शरीर दिया है। अतः हमें इसका सदुपयोग कर ईश्वर की अधिक से अधिक सहायता व कृपा को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो हम ईश्वर की सुख, सम्पत्ति, आत्मोन्नति, अच्छा स्वास्थ्य, अच्छे ज्ञानी व महात्मा स्वभाव वाले विद्वानों व मित्रों की संगति आदि भावी कृपाओं से वंचित हो जायेंगे।

बृहदारण्यक उपनिषद के ऋषि ने जीवन निर्माण के स्वर्णिम सूत्र **‘असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योर्तिगमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय।।’** दिये हैं। यह सूत्र उस प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयोगी व लाभदायक हैं जो जीवन को इसके वास्तविक लक्ष्य पर ले जाना वा पहुंचाना चाहते हैं। इसके लिए इसमें पहली शिक्षा यह दी गई है कि **‘असतो मा सद्गमय’** अर्थात् मनुष्य जीवन को जीवात्मा में विद्यमान असत् को हटाकर सत्य मार्ग पर चलाना है। ऐसा इसलिये कहा गया है कि असत मार्ग अवनति वा दुःख की ओर ले जाता है और सत मार्ग उन्नति व सुख की ओर ले जाता है। संसार में कोई भी मनुष्य वा प्राणी दुःख नहीं चाहता। सभी कामना करते हैं कि मेरे सारे दुःख दूर हो जाये और सभी सुखों की उपलब्धि व प्राप्ति मुझे हो। इसका उपाय ही उपनिषद के ऋषि ने **‘असतो मा सद्गमय’** कहकर बताया है। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज का चैथा नियम इसके समान ही बनाया है। नियम है कि **‘सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।’** इसका प्रयोजन भी वही है जो कि **‘असतो मा सद्गमय’** का है। इस नियम को विचार कर हमें लगता है कि इसे देश व विश्व का ध्येय वाक्य बना देना चाहिये। शिक्षा व विद्यालयों में हर स्तर पर इसका विवेचन व प्रचार हो और यह हमारे जीवन के लिए एक कसौटी का कार्य करे। हमें प्रतिदन विचार करना चाहिये कि हमारे जीवन में इस आदर्श का कितना भाग विद्यमान है। महर्षि दयानन्द सहित हमारे सभी ऋषि-मुनि व महापुरुष इसी मार्ग पर चले थे। उन्होंने इस वैदिक ज्ञानयुक्त मान्यता का अपने जीवनों में पूरा-पूरा पालन किया था और इसी से वह सब महान बने थे। आज मनुष्य जाति का जो पतन देखने को मिलता है उसमें कहीं न कहीं इस नियम की उपेक्षा ही दृष्टिगोचर होती दिखाई देती है। इस नियम के पालन न करने से ही प्राचीन काल में यज्ञों में पशुओं की हिंसा होती थी, इसी के कारण देश को मूर्तिपूजा, अवतारवाद की कल्पना, फलित ज्योतिष, वेदाध्ययन में प्रमाद, सामाजिक असमानता व विषमता, छोटे-बडे की भावना, बाल विवाह, मांसाहार, मदिरापान, धूम्रपान, असद् व्यवहार वा भ्रष्टाचार के रोग लगे। सन् 1863 से सन् 1883 तक महर्षि दयानन्द ने धार्मिक व सामाजिक इन अज्ञान, अविवेकपूर्ण व मिथ्या अन्धविश्वासों का खण्डन किया और सद्ज्ञान का प्रसार करने के लिए ईश्वर प्रदत्त सत्यज्ञान युक्त वेदों की मान्यताओं का देश व भूमण्डल में प्रचार किया। इसे जितने अंशों में देश समाज व विश्व ने अपनाया है उसी अनुपात में आज हम देश व समाज की उन्नति देख रहे हैं। उद्देश्य से अभी हम बहुत पीछे हैं। लगता है कि देश अब रूक गया है। लोग परा व आध्यात्म विद्या की उपेक्षा कर रहे हैं और केवल अपरा विद्या वा भौतिक ज्ञान में ही डूबकी लगा रहे हैं। अतः आध्यात्मिक विद्या की उन्नति द्वारा मनुष्य जीवन से असद् व्यवहार को हटाकर सद्व्यवहार को स्थापित करना ही ईश्वर को प्रसन्न करना व उससे सभी सात्विक सर्वोत्तम सम्पत्तियों को प्राप्त करने का मार्ग विदित होता है।

उपनिषद के ऋषि ने इसके बाद **‘तमसो मा ज्योतिर्गमय’** कह कर यह भी सुस्पष्ट कर दिया कि जीवन में तम, अज्ञान व मिथ्याचरण नाम मात्र का भी नहीं होना चाहिये। यदि जीवन में तम रूपी अज्ञान व अन्धकार होगा तो वह सद्गमय के हमारे ध्येय में बाधक होगा। इसलिये तम के अज्ञान व अन्धकार को ज्ञान की ज्योति से दूर करने की शिक्षा उन्होंने दी है। यह तम व अज्ञान ऐसा है कि कई बार यह बडे-बड़े ज्ञानियों को भी लग जाता है। यह तम मनुष्यों में राग, द्वेष, काम, क्रोध व अहंकार आदि मिथ्या बातों के स्वभाव में आ जाने पर प्रविष्ट हो जाता है जिन पर विजय पाना कठिन होता है। आज देखा जाये तो साधारण मनुष्य से लेकर विद्वान तक प्रायः सभी इन तमों से ग्रसित हैं। इसके लिये वेदादि सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय व प्रातः सायं ईश्वरोपासना, योगाभ्यास, यज्ञाग्निहोत्रादि अनुष्ठान सहित सत्पुरुषों की संगति आवश्यक होती है। सन्ध्या में चिन्तन करते हुए भी यह देखना उचित होता है कि मेरे अन्तःकरण में ये मानसिक रोग व विकार हैं अथवा नहीं। यदि हों तो उन्हें विचार कर दूर करने का दृण संकल्प लेना चाहिये और प्रातः सायं उसकी विद्यमानता पर विचार कर उसको जीवन से दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। तम रहित ज्योतिर्मय जीवन ही सदगमय का प्रतीक सात्विक व पारमार्थिक जीवन होता है। सत्य का धारण और तम रूपी असत्य का निरन्तर त्याग ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य है और इसको करके ही हम मनुष्य कहलाते हैं। हमें मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम, योगेश्वर श्री कृष्ण और वेदभक्त महर्षि दयानन्द में सदाचार का धारण ही उनकी दिव्यता का कारण अनुभव होता है। उन्हीं का अनुकरण हमें भी करके उनके समान बनना है। यही इन महापुरुषों को मानने व उनके गुण-कीर्तन करने का प्रयोजन हेै।

सूत्र की तीसरी व अन्तिम शिक्षा है कि **‘मृत्योर्मा अमृतं गमय’** अर्थात् मैं मृत्यु पर विजय प्राप्त करूं और अमृत अर्थात् जन्म-मरण से अवकाश प्राप्त कर मोक्ष की प्राप्ति करूं। **यह अमृत वा मोक्ष ही मनुष्य जीवन का सर्वोत्तम लक्ष्य व सम्पत्ति है।** यही वास्तविक व सर्वोत्तम स्वर्ग, विष्णुलोक व 24x7 वा निरन्तर ईश्वर की उपलब्धता की स्थिति है जिसमें जीवात्मा ईश्वर में निहित अमृतमय आनन्द का भोग करते हुए ईश्वर के साथ ईश्वर प्रदत्त अनेक शक्तियों से विद्यमान रहता है। इसके विपरीत विद्वानो,ं धार्मिक गुरुओं वा प्रचारकों द्वारा स्वर्ग आदि की जो कल्पनायें की जाति है वह यथार्थ नहीं है। उपनिषद की इसी शिक्षा के समान यजुर्वेद के अध्याय 30 का तीसरा मन्त्र **‘ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रन्तन्न आसुव।।’** भी है। इसका हम प्रतिदिन अर्थ सहित पाठ करते ही हैं जिसमें कहा गया है कि **‘हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिए और जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कीजिए।’**इस मन्त्र के अर्थ में **‘जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कीजिए।’**, इसमें सभी प्रकार के सात्विक सांसारिक सुखों के साधनों व सम्पत्तियों सहित अमृतमय मोक्ष सुख भी सम्मिलित हैं।

हम आशा करते हैं कि पाठक इस लेख पर विचार कर उपनिषद वाक्य में वर्णित वैदिक शिक्षा को अपने जीवन में अपनायेंगे और महर्षि दयानन्द द्वारा जनसाधारण की भाषा में लिखित सत्यार्थ प्रकाश आदि अन्यान्य ग्रन्थों का अध्ययन वा स्वाध्याय कर अपने जीवन को मनुष्य जीवन के ध्येय सर्वोत्तम सुख मोक्ष की ओर अग्रसर करेंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**